Research Paper | IMPACT FACTOR VALUE : 5.983 | E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 11 | ISSUE : 6 | JUNE 2025

राजस्थान में जैन श्वेताम्बर तेरापंथ स्थल लाडनूं का एक ऐतिहासिक अध्ययन

ऋषभ जैन [1] | डॉ. विक्रम सिंह देओल [2]

[1] शोधार्थी (इतिहास), महाराजा गंगा सिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान.

[2] आचार्य एवं शोध निर्देशक (इतिहास), डाॅ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान.

ABSTRACT:

प्रस्तुत शोध-पत्र में राजस्थान के नागौर जिले में स्थित जैन श्वेताम्बर तेरापंथ स्थल लाडनूं का ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन किया गया है। नैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक चेतना तथा आध्यात्मिक दृष्टि से इस कस्बे का इतिहास समृद्धशाली एवं गौरवमयी रहा है। जैन मंदिर स्थापत्य एवं मूर्तिकला की विशिष्टता वाला यह कस्बा राजस्थान का प्रमुख दर्शनीय जैन तीर्थ स्थल है। श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर में स्थापित प्रसिद्ध जैन सरस्वती प्रतिमा यहाँ की विशेष पहचान है। महाभारत काल से ही कस्बे के बारे में ऐतिहासिक जानकारियाँ उपलब्ध हैं। वर्तमान में जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय के कारण यह आध्यात्मिक शिक्षा एवं ज्ञान का एक प्रमुख केंद्र बन गया है। शिक्षा का केंद्र होने के साथ-साथ यहाँ पर्यटन विकास की पर्याप्त संभावनाएं विद्यमान हैं।

KEYWORDS:

जैन श्वेताम्बर तेरापंथ, जैन मंदिर स्थापत्य, मूर्तिकला, तीर्थ स्थल, दिगम्बर, महाभारत काल।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
25th June 2025	30th June 2025

परिचय: राजस्थान में तेरापंथ के ऐतिहासिक स्थल

तेरापंथ धर्म संघ जैन धर्म का नूतन सम्प्रदाय है। इसके प्रवर्तक स्वामी भीखणजी ने इसकी संगठना में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। आचारविशुद्धि के साथ-साथ उन्होंने संघ की एकता पर विशेष बल दिया। उन्होंने संघ की नियमावली में इस प्रकार की सुव्यवस्था की कि संघ का हर सदस्य परस्पर समानता का अनुभव कर सके, पक्षपात-रहित न्याय प्राप्त कर सके, आवश्यकता होने पर पूर्णरूपेण सेवा प्राप्त कर सके। अभी तक तेरापंथ धर्मसंघ में कुल 10 आचार्य हो चुके हैं। जहाँ तक तेरापंथ के ऐतिहासिक स्थलों की बात है तो जहां-जहाँ आचार्यों के जन्म स्थान रहे, उनके दीक्षित स्थल रहे, कर्म स्थल रहे, निर्वाण स्थल रहे, उन्हें ऐतिहासिक स्थल के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसी परिप्रेक्ष्य में नागौर जिले में स्थित लाडनूं तेरापंथ सम्प्रदाय का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र है, जिसका ऐतिहासिक अध्ययन इस शोध-पत्र में किया गया है।

लाडनूं: आचार्य श्री तुलसी की जन्मभूमि

राजस्थान के नागौर जिले का लाडनूं शहर अपनी नैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक चेतना तथा आध्यात्मिक दृष्टि से काफी समृद्ध रहा है।यहकस्बा जिला मुख्यालय नागौर से 100, जोधपुर से 250 एवं जयपुर से 210 कि.मी. की दूरीपर डेगाना-दिल्ली-जोधपुर रेलवे मार्ग पर बसा हुआ है। यह जैन मंदिरों का शहर है और श्रीमहावीर जी के पश्चात् जैन समुदाय के अनुयायियों द्वारा सर्वाधिक दर्शनीय तीर्थ स्थलों में से एक है। व्यापक संगमरमर की कारीगरी वाले अनेक जैन मंदिर तथा धार्मिक एवं स्थापत्य महत्त्व के अन्य पुराने मंदिर यहाँ स्थित हैं।यहाँ की जैन सरस्वती प्रतिमा इस कस्बे की विशेष पहचान है, इसके अतिरिक्त यह तेरापंथ के आचार्य श्री तुलसी और महाप्रज्ञ की कर्मस्थली रहा है। यह कस्बा 8 पट्टियों और 48 गलियों में सुंदर तरीके से बसा हुआ है, जो कि अन्य कस्बों मुकाबले अपनी अलग पहचान रखता है।ऐतिहासिक दृष्टि से देश के प्रमुख व्यापारिक मार्ग पर स्थित होने के कारण लाडनूं जोधपुर, अजमेर और नागौर की राजसत्ताओं के नियंत्रण में रहा। मध्यकाल में विभिन्न सैनिक अभियानों के महत्त्वपूर्ण पड़ाव स्थल रहे इस समृद्धशाली कस्बे को कभी सेठाणा नाम से भी जाना जाता था। शहर की बड़ी झरोखेदार हवेलियाँ और संकरी गलियाँ आज भी अपनी जीवंतता की प्रतीक हैं। प्राचीन बावड़ी, कुएं और तालाब यहाँ के प्रमुख जल स्रोत रहे हैं। मोहिल (चैहान) शासकों ने यहाँअनेक स्मारक बनवाये थे। इसी कारण इस क्षेत्र को मोहिलवाटी (लाडनूं-चूरू) के नाम से भी जाना जाता था।

लाडनूं के बारे में सम्राट पृथ्वीराज चैहान के राजकवि चंदबरदाई के लिखे ग्रंथ पृथ्वीराज रासो के अलावा अनेक साहित्यकारों के लेखों में भीविस्तृत वर्णन मिलता है। विभिन्न पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर यह कस्बा आठवीं से सोलहवीं सदी तक एक शानदार नगर रहा था। उस समय यह बूढ़ी चंदेरी, गंधर्व वन, महिपतिपुर, खडत्यावास के नाम से जाना जाता था। वास्तव में, लाडनूं कस्बा और इसका आस-पास का क्षेत्र जैन संस्कृति का महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहा है। लाडनूं का समीपवर्ती क्षेत्र छापर द्रोणपुर के नाम से भी जाना जाता है। महाभारत काल में यह शिशुपालवंशीय डाहलिया पंवारों के अलावा जोहियों, मोहिल (चौहान), राठौड़-जोधा राजवंश के अधीन रहा था। इस कस्बे का नाम आते ही यहाँ का प्राचीन इतिहास, इस पुण्य और वीर भूमि की महान् गाथाएं, वीर योद्धाओं का मातृ-सम्मान, मिट्टी के कण-कण में समाया मानवीय शौर्य, सजीव कला, मंडितगढ़, मंदिर, मठ, विहार, सभा मंडप, तोरण, झती झरोखे और अट्टालिकाएं नेत्रों के सामने प्रकट होने लगती हैं। भवन समन्वय शैली के अंतर्गत हिन्दू, मुस्लिम, राठौड़ आदि शैलियों का अद्भुत मिश्रण यहाँ मिलता है। यहाँ के प्राचीन और भव्य किले की प्राचीरों में चूने हुए खामोश अवशेष, भूमि की परतों में दबी अनकही कहानियाँ, यहाँ के लाडलों का जीवन चक्र, एक के बाद एक घटी यहां की ऐतिहासिक घटनाएं, जिन्हें याद करते ही सिहर उठता तन-मन आत्म-गौरव से भर जाता है। इस कस्बे में श्री चारभुजानाथ मंदिर, श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर,श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर (सुख आश्रम), श्वेताम्बर जैन मंदिरके अतिरिक्त नसिया, राहु गेट, गौशाला, नीलकण्ठ महादेव मंदिर, करंट बालाजी मंदिर, रामद्वारा, मस्जिदें, बावड़ियाँ, गढ़ के अवशेष, कलात्मक भव्य छतरियाँ, शिलालेख, विभिन्न संस्थाएं आदि प्रमुख हैं। आचार्य श्री तुलसी की जन्मस्थली के रूप में यहाँ कला, ज्ञान और ध्यान की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। उन्होंने 'अणुव्रत' के दर्शन का प्रचार किया। जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय के कारण इस कस्बे को शिक्षा के क्षेत्र में विशेष पहचान मिल रही है।

लाड़नूं का इतिहास

महाभारत काल में इस प्रदेश का नाम गंधर्व वन था, कालांतर में यह प्रदेश कृष्ण के समकालीन शिशुपालवंशीय परंपरा के ही पंवार डाहलिया राजपूतों के अधीन था। डाहलिया चंदेल थे, जिसके चलते इस स्थान को बूढ़ी चंदेरी के नाम से जाना जाता था। इस संदर्भ में बारहवीं शताब्दी में रचित डिंगल भाषा के ग्रंथ पृथ्वीराज रासो में शिशुपालवंश द्वारा शासित नगरी चंदेरी, जो वर्तमान में लाडनूं शहर के नाम से जाना जाता है, का उल्लेख मिलता

है।लाडनूं का 3000 ईसा पूर्व तक का हो सकता है। महाभारत में भी आचार्य भारद्वाज के आश्रम के अंतर्गत गंधर्व वन के नाम से उनके शिष्यों द्वारा उन्हें दिये गये 1440 गाँवों का उल्लेख मिलता है। आचार्य आश्रम कवला पहाड (काला डूंगर) आजकल चाड़बास के पास स्थित रहा होगा। महाभारत के पश्चात् इस पर नकुल और सहदेव का अधिकार रहा। तत्पश्चात् शिशुपाल के वंशजों ने चंदेल, पंवार, डाहलिया राजपूत राजवंश पर विजय प्राप्त की। पटेल शासकों ने किले, महल एवंजाड़ी (बावड़ी) का निर्माण करवाया। इन शासकों की लोकप्रियता के कारण शहर को चंदेली, पुरानी चंदेरी या चंदेरी नगरी के नाम से जाना जाता था। 270 ईसा पूर्व में मौर्य साम्राज्य के अंतर्गत सम्राट अशोक ने किले के समीप एक बौद्ध मठ का निर्माण करवाया था, जिसके खंडहर लाडनूं गढ़ की दीवारों में देखे जा सकते हैं। 232 ईसा पूर्व में अशोक के पौत्र सम्प्रति ने एक भव्य जैन मंदिर बनवाया, जिसके अवशेष दिगंबर जैन बड़ा मंदिर में सुरक्षित हैं।

65-73 ई. में सिंध शासक ने चंदेरी पर कब्जा कर लिया और इस युद्ध में पटेल राजा वीरपाल मारा गया। आठ वर्ष बाद एकजुट होकर 73 ई. में चंदेलों ने पुनः विजय प्राप्त की। 117 ई. में चंदेल राजा महीपतिपाल के शासन में महीपतिपुर के नाम से प्रसिद्ध था, उस पर नागर के बंगड़ी राजपूत ने आक्रमण किया और युद्ध में 600 चंदेल मारे गये। 574 ई. में चैहान राजा राणा मोहिल ने सेना एकत्रित कर महीपतिपुर पर आक्रमण कर उसे जीत लिया, बंगड़ी राजपूत भाग गये। तब से 1440 गाँवों का नियंत्रण मोहिलों के अधीन आ गया। 895 ई. गोहिल राजा सहानपान ने पंडित लाडो जी पारीक की पुत्री के रूप में गढ़ की मरम्मत करवायी, आधारशिला पर लाडो का बलिदान दिया गया। तभी से महीपतिपुर को लाडनूं के नाम से जाना जाता है। 953, लाडनूं किले की दीवार पर पदाज दुहित्रक सुव का उल्लेख होने से यह संभव हो सकता है कि लाडनूं शिशुपाल के नागा वंश के नियंत्रण में हो। 1377-1343, जोधपुर की ख्यात के अनुसार, 1377 में लाडनूं के बीच युद्ध हुआ था। शासक मोहिल और राजपूत वीरम, वीरम के सभी रिश्तेदारों को खाणपुर गाँव के पास मार दिया गया था। 1475 ई. में राव जोधा, राव बीका और राव बीदा की संयुक्त सेना ने लाडनूं के शासक वैस्सल, हिसार के सूबेदार सारण खान और दिल्ली के बहलोल लोदी की संयुक्त सेना को हराया और इस प्रकार लाडनूं जोधपुर राज्य का हिस्सा बन गया। 1483 में लाडनूं जोधपुर नियंत्रण में सुरक्षित था, मोहिल सरदार राव जप सिंह लोकप्रिय प्रशासक थे और वे जनकल्याण में गहन रुचि रखते थे, उन्होंने 1483 में कवि जरसुदान चारण के पुत्र कवि सोमर को खेती के लिये 1500 बीघा जमीन और निवास के लिए 12 बीघा जमीन प्रदान की। 1532 ई. में जोधपुर के राजा मानदेव राठौड़ ने लाडनूं पर कब्जा कर लिया और शासन किया। 1783 में, मीर फतेह अली खान तालपुर के नेतृत्व में जालपुर ने दिल्ली सल्तनत के समर्थन से सिंध और अमरकोट पर हमला किया। लाडनूं के ठाकुर शिवदान सिंह अमरकोट के सोड़ा के साथ खड़े रहे, उन्होंने बहादुरी से लड़ते हुए महान् भूमिका निभाई। वे युद्ध में अपने सैनिकों के साथ वीरगति को प्राप्त हुए। राहु गेट के बाहर स्थित युद्ध स्मारक छतरियाँ हमें इन योद्धाओं की वीरता की याद दिलाती हैं। 1807 ठाकुर मंगल सिंह एक हाथ से 35 सेर भाला फेंकने के लिए लोकप्रिय थे। उन्होंने डाकू तारा चंदावत को घोड़े सहित नारायण तालाब के पास एक ही प्रयास में मार गिराया। उन्होंने लाडनूं का विकास किया। राज्यों के विलय से पहले लाडनूं तत्कालीन जोधपुर राज्य का हिस्सा था।

श्री दिगंबर जैन बड़ा मंदिर

वैसे तो लाडनूं कस्बे में अनेक प्राचीन धरोहरें मौजूद हैं परंतु उनमें से जैन कला और संस्कृति का स्थापत्य एवं पुरातत्त्व महत्त्व का श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर भारतीय स्थापत्य एवं मूर्ति कला की अनुपम धरोहर है।यह मंदिर जैनियों के 16वें तीर्थकर भगवान शांतिनाथ को समर्पित है। मंदिर के एक दरवाजे पर मिले एक शिलालेख के अनुसार इस भव्य मंदिर का निर्माण 1079 ईस्वी (वि. सं. 1136) में हुआ था।मंदिर चबूतरे के स्तर से 11 फीट नीचे भूमिगत बनाया गया है। इस भूमिगत मंदिर के चार कलात्मक प्रवेशद्वार हैं। मंदिर के शिखर, स्तंभों और छत को खूबसूरती से सजाया गया है, जिसकी नक्काशी एवं सूक्ष्म कारीगरी बेमिसाल है। मंदिर जैन दर्शन सिद्धान्तों, जिनकल्याण, तीर्थ क्षेत्र, मुनि उपसर्ग आदि की सुंदर स्वर्णकारी और चित्रकारी से भी सुशोभित है। मुख्य मंदिर में भगवान शांतिनाथ की पद्मासन मुद्रा में भव्य संगमरमर की मूर्ति स्थापित है। मूर्ति के सामने संगमरमर के दो खंभों पर कलात्मक दरवाजे का एक दुर्लभ टुकड़ा रखा हुआ है। इन स्तंभों पर देवी सरस्वती की दो कलात्मक एवं दुर्लभ छवियों का उत्कीर्ण है। जैनियों के दूसरे तीर्थंकर भगवान अजितनाथ जी की एक संगमरमर की मूर्ति एक अन्य मंदिर में स्थापित है। इस पर एक शिलालेख से पता चलता है कि इसे 1152 ईस्वी (वि. सं. 1209) में बनाया गया था। मूर्ति के सामने एक संगमरमर का दरवाजा है, जिसके दोनोंस्तंभ कलात्मक जैन छवियों से सजाये गये हैं। भूमिगतमंदिर में दो स्तम्भों पर चरण पादुका चिन्ह के साथ अभिलेख भी अंकित है। मंदिर की विश्व प्रसिद्ध चतुर्भुजी जैन सरस्वती (वाग्देवी) मूर्ति अद्भुत है, जिस पर वि. सं. 1219 (सन् 1162 ई.) का शिलालेख अंकित है।

मंदिर परिसर के अंदर एक आर्ट गैलरी भी स्थित है। इसमें जैन तीर्थंकरों की कई कलात्मक और दुर्लभ मूर्तियाँ हैं, जो विभिन्न खुदाई के दौरान इस कस्बे से प्राप्त हुई थीं। कस्बे के आसपास के इलाकों से भी खुदाई में मिली धातुओं की कई अन्य प्रतिमाएं भी यहाँ सुरक्षित हैं।यहाँसुंदर चित्र, उत्कीर्ण स्तंभ, कला के दुर्लभ टुकड़े और पुरानी जैन धर्म पांडुलिपियाँभी हैं। यहां भगवान ऋषभदेव (जैनियों के प्रथम तीर्थकर) की भूरे पत्थर की मूर्ति, भगवान पाश्र्वनाथ (जैनियों के 23वें तीर्थंकर) की नौ सिर वाले नागोंके साथ दो मूर्तियाँ एवं भगवान नेमिनाथ (जैनियों के 22वें तीर्थंकर) की एक सुंदर प्रतिमा विद्यमान हैं।

जैन विश्व भारती

गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी और आचार्य श्री महाप्रज्ञ की प्रेरणा से, जैन विश्व भारती (श्रटठ) की स्थापना वर्ष 1970 में लाडनूं में की गई थी। जैन अध्ययन और प्राकृत भाषा के क्षेत्र में उत्कृष्टता का केंद्र होने के अलावा यह संस्थान अहिंसा, जीवन विज्ञान और प्रेक्षा ध्यान सीखने का एक अंतरराष्ट्रीय केंद्र भी बन चुका है।जैन विश्व भारती का मुख्य उद्देश्य सामाजिक-आध्यात्मिक मूल्यों, यथा शिक्षा, सेवा, आध्यात्मिकता, साहित्य, अनुसंधान, समन्वय एवं संस्कृति का उत्थान है।

जैन विश्व भारती संस्थान- जैन विश्व भारती संस्थान (अब डीम्ड विश्वविद्यालय) की स्थापना 1991 में युगदृष्टा, विद्वान् संत और परम पावन आचार्य श्री तुलसी की प्रेरणा से की गई थी। परम पावन जैन तेरापंथ धार्मिक संप्रदाय के सर्वोच्च प्रमुख, नौवें आचार्य थे। वह संस्थान के पहले अनुशास्ता थे और आचार्य श्री महाप्रज्ञ उनके उत्तराधिकारी थे। जैन विश्व भारती संस्थान को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) द्वारा ‘मानित विश्वविद्यालय’ का दर्जा भारत सरकार की सिफारिश पर 20 मार्च 1991 में यूजीसी अधिनियम 1956 के अतर्गत दिया गया था। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग क्रमांक एफ.6- 1(11)/2006 (सीपीपी-1) दिनांक 13.09.2006 की अधिसूचना के अनुसार, जैन विश्व भारती संस्थान का नाम बदलकर जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय कर दिया गया है। विश्वविद्यालय चरित्र निर्माण को अधिक महत्त्व देता है और इसका उद्देश्य व्यक्ति का समग्र बौद्धिक विकास करना है। संस्थान राजस्थान के नागौर जिले के एक छोटे से शहर लाडनूं में स्थित है। यहाँ कई विभाग/अध्ययन केंद्र हैं, जैसे- जैन दर्शन और तुलनात्मक धर्म और दर्शन विभाग, संस्कृत एवं प्राकृत विभाग, जीवन विज्ञान, प्रेक्षा ध्यान एवं योग विभाग, अहिंसा एवं शांति विभाग, शिक्षा विभाग, सामाजिक कार्य विभाग, अंग्रेजी विभाग, महादेवलाल सरावगी अनेकांत शोधपीठ, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, विस्तार निदेशालय आदि। **महादेवलाल सरावगी अनेकांत शोधपीठ** की स्थापना प्राच्य विद्या के सभी विषयों, विशेषकर जैनदर्शन में अनुसंधान कार्य को सुविधाजनक बनाने के लिए की गई है। वर्ष 1977 में आचार्य श्री तुलसी द्वारा स्थापित **समण संस्कृति संकाय** जैन विश्व भारती की सक्रिय शिक्षा केंद्रित शाखा है जो आने वाली पीढ़ियों के लिए जैन धर्म, प्राचीन साहित्य और दर्शन पर अध्ययन और सांस्कृतिक मूल्यों को आत्मसात् करने और अपनाने के लिए हमारी प्रयोगशाला है ताकि वे जैन सांस्कृतिक मूल्यों को संरक्षित और कायम रख सके। इस संकाय का पाठ्यक्रम बिना किसी, जाति और पंथ की शर्तों के जैन साहित्यिक, दर्शन और आध्यात्मिक मूल्यों को सीखने का क्षितिज खोलता है। विश्वविद्यालय का **केंद्रीय पुस्तकालय**, जिसे ’वर्धमान ग्रंथागार’ के नाम से भी जाना जाता है, में 66,000 से ज्यादा पुस्तकें और 6000 से ज्यादा दुर्लभ पांडुलिपियां हैं। जैन विश्व भारती ‘सेवाभावी’ आयुर्वेदिक रसायनशाला **आरोग्यम्** भी चलाती है, जो एक स्वस्थ इकाई के रूप में कार्य करती है। इसका मुख्य उद्देश्य आम जनता के लिए सिद्ध और विश्वसनीय आयुर्वेदिक दवाओं का निर्माण और उपलब्ध कराना है।इसके अतिरिक्त **आचार्य कालू कन्या महाविद्यालय विश्वविद्यालय** का एक संघटक महाविद्यालय है, जिसकी स्थापना आचार्यश्री कालूगणी के नाम पर की गई थी जो तेरापंथ धर्म संघ के आठवें आचार्य थे, जिन्होंने महिलाओं के उत्थान के लिए उनकी शिक्षा और प्रशिक्षण के लिए अथक प्रयास किए। यह महाविद्यालय उनकी स्मृति को समर्पित किया गया है जो उच्च मानवीय मूल्यों और शिक्षा के माध्यम से आने वाली पीढ़ी में आत्म-निर्भरता की भावना को कायम रखता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः लाडनूं जैन धर्म की श्वेताम्बर शाखा के तेरापंथ धर्मसंघ में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता

है। इसी पंथ के नौवें आचार्य श्री तुलसी के समय संघ के सर्वतोमुखी विकास के साथ नये आयाम स्थापित हुए। साथ ही, जैन विश्व भारती की स्थापना से इस कस्बे ने आध्यात्मिक शिक्षा एवं ज्ञान के केंद्र के रूप में देश के मानचित्र पर अपनी पहचान बनायी है। इसका इतिहास समृद्धशाली एवं गौरवमयी रहा है, विशेषकर जैन स्थापत्य एवं मूर्तिकला की दृष्टि से इसे प्रसिद्धि मिली है। कस्बे की प्राचीनता एवं इतिहास से संबंधित अनेक धारणाएं आज भी जनसामान्य में यहाँ प्रचलित है। शिक्षा के साथ-साथ पर्यटन स्थल के रूप में भी यह कस्बा विकास की पर्याप्त संभावनाएं रखता है।

REFERENCES

1. नरेन्द्र भानावत, संपा.: जैन संस्कृति और राजस्थान (राजस्थान के सांस्कृतिक विकास में जैनधर्म के बहुआयामी योगदान का मूल्यांकन), सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल, जयपुर, जिनवाणी विशेषांक, अप्रेल-जुलाई, 1975.

2. Fulchand Jain Premi: *Artistic Splendor of the Jain Temple of Ladnun*.

3. गोविन्द अग्रवाल: चुरू मंडल का शोधपूर्ण इतिहास, प्रथम खंड, लोक संस्कृति शोध संस्थान, चुरू, 1974.

4. https://www.jvbi.ac.in (Website).